आतंकवाद: अर्थ और विकल्प

डॉ. संजय लोढ़ा

आतंकवाद आज विश्व के लिए एक गंभीर समस्या है इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है। इस समस्या का समाधान होना चाहिए यह भी सर्वमान्य है। परंतु हम यह मानते हैं कि किसी भी समस्या का समाधान तभी संभव है जब यह जान लिया जाए कि समस्या का स्वरूप क्या है? आतंकवाद के प्रश्न पर सबसे बड़ी समस्या तो यह है कि आतंकवाद को परिभाषित कैसे किया जाए। जब तक यह स्पष्ट नहीं होता है कि आतंकवाद क्या है तब तक इसे दूर करने के प्रयास आधे-अधूरे ही रहेंगे।

आतंकवाद का अर्थ

आतंकवाद की कोई मानक परिभाषा नहीं होने के पीछे समझ यह है कि समय, परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुसार आतंकवाद के अर्थ में हेरफेर किया जा सके। 11 सितंबर, 2001 के हादसे के बाद आतंकवाद की परिभाषा में आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर काट-छांट की गई। पहले तो यह कहा गया कि अमेरिकी नागरिकों के खिलाफ कहीं भी हिंसा की गतिविधि आतंकवाद है। यदि ऐसी हिंसा किसी दूसरे देश के नागरिकों के साथ हो तो उसका कोई महत्व नहीं है। लेकिन जब इस परिभाषा पर कुछ ऐसे देशों द्वारा एतराज किया गया जिन्हें अमेरिका आतंकवाद उन्मूलन अभियान में अपने साथ रखना चाहता था तो परिभाषा को कुछ विस्तृत कर दिया गया। लेकिन यदि अमेरिका स्वयं इस प्रकार की गतिविधि में लिप्त हो तो उसे

आतंकवाद नहीं कहा जा सकता। यह भी देखने को मिला है कि उग्र एवं हिंसात्मक गतिविधियों के संलग्नवादी राज्य के आतंकवाद की भर्त्सना करते है पर स्वयं को आतंकवादी नहीं अपितु जेहादी या स्वतंत्रता सेनानी कहते है। राज्य स्वयं अपनी हिंसा को आतंकवाद नहीं मानता अपितु राज्य के अनुसार तो यह कार्यवाही राष्ट्रीय संप्रभुता की सुरक्षा के लिए है। कुछ विद्वान तो अब भूख, गरीबी, बेरोजगारी और पर्यावरणीय विनाश को भी आतंकवाद मानने लगे है।

इस अस्पष्टता की स्थिति में आतंकवाद की व्यवहारपरक परिभाषा आवश्यक है। समस्या की गंभीरता और साथ ही साथ व्यापकता को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यापक भय फैलाने हेतु कहीं भी और मुख्यतया नागरिक ठिकानों में हिंसा का प्रयोग या प्रयोग की धमकी ही आतंकवाद है। यह गतिविधि राज्य के द्वारा भी की जा सकती है, समूहों के द्वारा भी और एक व्यक्ति द्वारा भी। किसी राज्य के द्वारा ऐसी गतिविधि के लिए किसी व्यक्ति या समूह को सहयोग और संरक्षण भी प्रदान किया जा सकता है जिससे कि ऐसा राज्य किसी अन्य राज्य के विरुद्ध अपने राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति कर सके। यहां इस बात का महत्व नहीं है कि हिंसा करने वाले और उसे सहने वाले की नस्ल, जाति, राष्ट्रीयता, लिंग, धर्म आदि क्या है। और न ही राजनीतिक उद्देश्य का महत्व है। चाहे उस उद्देश्य का संबंध धर्म, राष्ट्रवाद, राष्ट्रीय हित, राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय स्वाधीनता, लोकतंत्र, साम्यवाद, शाश्वत-न्याय या फिर स्थाई स्वतंत्रता से हो। महत्व केवल इस बात का है कि हिंसा या खून का उद्देश्य ऐसी गतिविधि की वास्तविकता को नहीं बदल सकता। हिंसा करने वाला व्यक्ति, समूह या राज्य यह कहकर अपनी आपराधिक प्रवृत्ति से मुक्त नहीं हो सकता कि यह तो समानोदक नाश (Collateral damage) है। जिस हिंसात्मक कार्य से बड़े पैमाने पर मानव क्षति होती है ऐसा कार्य तो मानवता के विरुद्ध जघन्य अपराध है।

प्रश्न यहां पर यह उठता है कि कुछ ऐसी हिंसा भी है क्या जिसे आतंकवाद नहीं माना जा सकता। किसी भी आक्रामक सैनिक अभियान का सशस्त्र विरोध आतंकवाद की श्रेणी में नहीं आएगा और न ही किसी ऐसी हिंसा को आतंकवाद कहा जा सकता है जहां हिंसक इस यंत्र का सहारा इसलिए लेता है क्योंकि उसे विरोधी पक्ष ने उसके वतन से बेदखल कर दिया हो। फिलिस्तनियों द्वारा की जा रही कार्यवाही इसी श्रेणी में आती है। किसी ऐसे नेता की हत्या जो कि सामूहिक स्तर पर जातीय, नस्ली या अन्य किसी आधार पर लोगों को मौत के घाट उतार देता है या फिर उन्हें और कहीं भेज देता है—हिटलर, ईदी अमीन, पॉल पॉट इस श्रेणी में आते है।

आतंकवादी कौन

आतंकवाद की इस समझ के बाद यह चर्चा भी आवश्यक है कि आज के संदर्भ में आतंकवादी कौन है? अल-कायदा और ओसामा बिन लादेन पर तो समूचा विश्व उंगली उठा रहा है क्योंकि उन्होंने तथाकथित जेहादियों की अनेक देशों में एक ऐसी फौज बना दी है जो कभी भी और कहीं भी आत्मघाती हथियार का फर्ज अदा कर सकते है, परंतु इनसे भी अधिक भयावह इरादे और साजो-सामान तो उनके पास है जो अपने-आपको विश्व का मसीहा मानते है। यहां हमारा इशारा अमेरिकी तंत्र की ओर है—तंत्र इसलिए क्योंकि यह बात महत्वहीन है कि इस तंत्र का मालिक रोनाल्ड रीगन है या जॉर्ज बुश सीनियर या बिल क्लिंटन या फिर जॉर्ज बुश जूनियर। अभी हाल ही में भारत की यात्रा पर आए प्रसिद्ध चिंतक नॉम चोमस्की से जब यह पूछा गया कि 11 सितंबर के हादसे के समय यदि वे अमेरिका के राष्ट्रपति होते तो क्या करते? तो उनका सपाट जवाब यह था कि वही करता जो कि बुश ने किया। अतः अमेरिकी संदर्भ में व्यक्ति विशेष से अधिक महत्व तंत्र का है।

शीत युद्ध के दौरान दोनों महाशक्तियों ने विश्व का द्विध्रुवीकरण कर दिया था। इस युद्ध की अपनी एक वैचारिक सोच और मर्यादाएं थीं। आज पुनः उसी राजनीतिक पर्यावरण का निर्माण किया जा रहा है। 20 सितंबर को जॉर्ज बुश ने घोषणा की कि या तो आप हमारे साथ है या फिर आतंकवादियों के साथ। 7 अक्टूबर को ओसामा ने चेतावनी दी कि संपूर्ण विश्व अब दो क्षेत्रों में बंट गया है—एक तो आस्था का है और दूसरा अधर्मी का। ओसामा और बुश दोनों ही इसे धार्मिक युद्ध की संज्ञा देते है। दोनों की ही कथनी और करनी में धार्मिक कट्टरवाद, सैनिकवाद और दमनवाद परस्पर जुड़े हुए है।

सांप्रदायिक आतंकवाद आज विश्व की प्रमुख समस्याओं में से एक है। लेकिन भारत इस समस्या से एक लंबे समय से जूझ रहा है। अगर अफगानिस्तान में तालिबान शासकों के द्वारा बामनिया बुद्ध की विशाल प्रतिमा को खंडित किया गया तो भारत में तो यह असभ्य कार्य आज से 9 वर्ष पूर्व ही हो गया था जब सांप्रदायिक आतंकवादियों के द्वारा बाबरी मस्जिद को गिरा दिया गया और इसके बाद हिंसा में मारे गए लोगों की संख्या वर्ल्ड ट्रेड सेंटर में मारे गए लोगों की संख्या से अधिक थी। आज राज्य का प्रश्रय मिलने के बाद इन सांप्रदायिक आतंकवादियों के विभिन्न गुटों ने भारत में शिक्षा, साहित्य, कला, सिनेमा, टीवी और अन्य क्षेत्रों में एक उन्मादी माहौल बना दिया है जिसने भारतीय उदारवादी लोकतंत्र की जड़ों को हिला दिया है। सुनियोजित ढंग से यह समुदाय न केवल अल्पसंख्यक संप्रदायों को आतंकित कर रहा है परंतु साथ ही साथ बहुसंख्यक हिंदुओं में भी यह डर पैदा किया जा रहा है कि वे उनकी सोच में बदलाव लाएं।

कुछ विद्वानों की यह मान्यता है कि आतंकवाद दमन और शोषण का परिणाम है। परंतु यदि ऐसा है तो क्यों नहीं विश्व के असंख्य शोषित लोग आतंकवादी बन गए। और फिर तो सबसे पहले आतंकवाद का सहारा तो महिलाओं को लेना था जो विश्व के प्रत्येक कोने में सर्वाधिक शोषित रही हैं। आतंकवाद को शोषण का परिणाम बताकर उसको न्यायोचित ठहराने की सोच सर्वथा अनुचित है। न केवल भारत में फैल रहे सांप्रदायिक आतंकवाद को बल्कि यूरोप और अमेरिका में फैल रहे दक्षिणपंथी ईसाई चरमपंथियों को भी क्या हम शोषण का परिणाम मान सकते हैं। ओसामा का आतंक तो पश्चिमी जगत में अब हुआ है परंतु उससे पहले ही वहां दक्षिणपंथियों ने अनेक ऐसी वारदातें की है जिसमें कई निर्दोष नागरिक मारे गए है। अमेरिकी गुप्तचर विभाग फेडरल ब्यूरो ऑफ इनवेस्टिगेशन के अनुसार अमेरिका में 40,000 से अधिक ऐसे निजी मिलिशिया हैं जो एक 'नई विश्व व्यवस्था' कायम करना चाहते हैं। ये सभी आधुनिकतम हथियारों से न केवल सुसज्जित है बल्कि साथ ही साथ प्रशिक्षित भी है। भारत में भी अब दक्षिणपंथी अब इस प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे है क्योंकि अब केवल लाठी घुमाने से तो काम चलेगा नहीं।

ऐसे संगठन इसलिए नहीं बनते कि उनका शोषण या दमन हुआ है परंतु इसलिए बनते है क्योंकि उनके दमन करने के अधिकार में हस्तक्षेप हुआ है या फिर उसे नियंत्रित किया गया है। सांप्रदायिक आतंकवाद चाहे वह अल-कायदा हो या तालिबान या हिज्ब-उल-मुजाहिदीन या विश्व हिंदू परिषद या फिर नोर्थ अमेरिकन पेट्रियोट्स का हो उन लोगों का विवेकहीन प्रयास है जो पारंपरिक रूप से अपने समाजों में प्रभावशाली रहे है, पर सामाजिक परिवर्तन से उनके प्रभुत्व में कमी आ रही है। विकास की प्रक्रिया और लोकतांत्रिक व्यवस्था से उनके परंपरागत सामाजिक वर्चस्व को ठेस लगी है और वे किसी भी कीमत पर इस प्रक्रिया को रोकना चाहते है। पर उनकी आंतरिक समस्या यह है कि वे दो भागों में बंटे हुए है: एक तो वे जो परंपरागत मूल्यों को मानते हुए आधुनिकता को अपनाना चाहते है और दूसरे वे जो आधुनिकता को संपूर्ण रूप से नकारते है। भारत, पाकिस्तान, संउदी अरब, कुवैत की सरकारें पहले खेमे में हैं जो अमेरिकी गठबंधन का हिस्सा बनने के लिए आतुर हैं जबकि विश्व हिंदू परिषद, अल-कायदा, तालिबान आदि दूसरे खेमे में हैं। ये संगठन कहीं भी शोषण या दमन का विरोध नहीं कर रहे है बल्कि इनकी सोच तो यह है कि सभी मनुष्य समान नहीं होते हैं। परंतु ऐसे संगठनों को जन-समर्थन या सहानुभूति इसलिए प्राप्त हो जाती है क्योंकि ये भावनात्मक रूप से लोगों का शोषण करते है, जो इस्लाम को अपने संगठन का आधार बनाता है तो अमेरिका को मुस्लिम कौम का शत्रु बताता है, जो हिंदू धर्म को संगठन का आधार बनाता है उसे खतरा इस्लाम और ईसाई दोनों ही धर्मों से है। इस्लाम और हिंदू धर्म के ये स्वयंभू ठेकेदार अमेरिकी साम्राज्यवाद को अपना दुश्मन मानते हैं। इनके अनुसार यह साम्राज्यवाद ही लोगों के उत्पीड़न का कारण है। साम्राज्यवादी दमन इस तरह से सांप्रदायिक आतंकवाद को न केवल मान्यता प्रदान करता है बल्कि साथ ही साथ कट्टर समर्थ भी करता है।

इस विश्लेषण के आधार पर यदि यह कहा जाए कि विश्व स्तर पर साम्राज्यवादी आतंकवाद स्थानीय स्तरों पर सांप्रदायिक आतंकवाद का पोषण और संवर्द्धन करता है तो शायद गलत नहीं होगा। दोनों ही प्रकार के आतंकवाद एक समतावादी लोकतांत्रिक समाज के विरोधी हैं। सांप्रदायिक आतंकवाद की तुलना में साम्राज्यवादी आतंकवाद की पकड़, फैलाव और शक्ति बहुत

अधिक है। साम्राज्यवाद आज भी आर्थिक शोषण/दोहन के साथ ही साथ राजनीतिक और सैनिक वर्चस्व पर आधारित है। द्वितीय विश्व युद्ध केवल अधिनायकवादी शक्तियों के खिलाफ नहीं लड़ा गया था, बल्कि साथ ही साथ इसके द्वारा साम्राज्यवादी अपने साम्राज्य का पुनर्विभाजन भी कर रहे थे। शीत युद्ध के दौरान साम्यवाद के विरोध के लिए अमेरिका ने अनेक देशों में ऐसी सरकारें थोपी जिनकी कारगुजारियों ने हिटलर को भी पीछे छोड़ दिया। विश्व के अनेक देश अमेरिका को लोकतंत्र, उदारवाद या स्वतंत्रता के प्रतीक के रूप में नहीं अपितु दमन, अधिकनायकवाद, तानाशाही, उत्पीड़न और सामाजिक पतन के सरगना के रूप में देखते है।

इससे भी इंकार नहीं किया जा सकता कि साम्राज्यवाद का संबंध नस्लवाद से होता है। नस्लवादी और जातीय सर्वोच्चता का आधार साम्राज्यवाद को एकाधिकारवादी पूंजीवाद से भिन्नता प्रदान करता है। आधुनिक अमेरिकी साम्राज्यवाद श्वेत वर्णीय सर्वोच्चता की सोच पर भी टिका हुआ है। द्वितीय विश्व युद्ध में जर्मनी के खिलाफ अणु बम का प्रयोग नहीं किया गया। रासायनिक हथियारों का प्रयोग भी वियतनाम में हुआ। युगोस्लाविया में वैसी बरबादी नहीं की गई जैसी ईराक में की जा रही है। किसी भी श्वेतवर्णीय देश के विरुद्ध प्रतिबंध नहीं लगाए गए जैसे ईराक के खिलाफ लगाए जा रहे है जिनसे उस देश के नागरिकों को दवाईयां और खाने-पीने का सामान भी मिलना दुर्लभ होता जा रहा है। अफगानिस्तान में यह आशंका व्यक्त की जा रही है कि लाखों लोग इस सर्दी के मौसम में भूख से मरने वाले है। यह मौत तब और भी भयावह हो जाती है जब आकाश से अमेरिकी विमानों द्वारा गिराए जा रहे 'फूड पैकेट' को लेने के लिए बच्चे और वृद्ध भागते हुए उन बारूदी सुरंगों पर पैर रख देते है जो पूरे देश में सोवियत सेनाओं के द्वारा बिछाई गई थी। और अब तो पुटिन का रूस भी बुश के अमेरिका के साथ है और शायद शीघ्र ही 'नाटो' देशों में शामिल हो जाएगा। साम्राज्यवाद का यह वर्णीय आधार आर्थिक तंत्र से तब जुड़ जाता है जब हमें यह पता चलता है कि बहुराष्ट्रीय कारलाईल औद्योगिक समूह में ओसामा के पिता और जॉर्ज बुश सीनियर हिस्सेदार है और इस समूह के द्वारा हथियार उद्योग में बड़ी मात्रा में पूंजी निवेश किया गया है। बेटों द्वारा फैलाए गए आतंकवादी युद्ध का आर्थिक लाभ दोनों पिताओं को मिल रहा है और यदि इस सारे नाटक में कुछ लाख लोग मारे जाएं तो क्या फर्क पड़ता है। भारत में भी शासक वर्ग और उनके समर्थक समूह हथियारों के अनियंत्रित क्रय से अपनी जेबों को गर्म कर रहे है और इस क्रय को न्यायोचित बताने के लिए जहां एक ओर आतंकवाद का भय बढ़ा रहे है वहीं राज्य द्वारा फैलाए जा रहे आतंकवाद को आवश्यक कह रहे है। आतंकवाद की इस त्रिकोणीय व्यवस्था में चाहे तीनों पक्षों में प्रत्यक्ष सहमति नहीं हो परंतु परोक्ष रूप से तीनों परस्पर राजनीतिक और आर्थिक लाभ तो उठा ही रहे है।

विकल्प

सांप्रदायिक और साम्राज्यवादी आतंकवाद परस्पर पोषक और संवर्द्धक है। परंतु इनका विकल्प क्या है? फुकुयामा के साथ यह तो नहीं कहा जा सकता कि इतिहास का अंत हो गया है और न ही हंटिंगटन के सभ्यताओं के संघर्ष के दृष्टिकोण को भविष्य का आधार बनाया जा सकता है। सर्वप्रथम तो यही आवश्यक है कि आतंकवादियों की इस साजिश का पर्दाफाश किया जाए। इस अभियान में अधिक से अधिक लोगों की सहभागिता अपेक्षित है। एक अमेरिकी चिंतक जेफ पेटरसन ने कहा कि पहले से कहीं अधिक आज दुनिया के लोग अमेरिका से असुरक्षित है और स्वयं अमेरिकी भी अमेरिका से सुरक्षित नहीं है। भारतीयों पर भी यह बात शत-प्रतिशत लागू होती है। दूसरी आवश्यकता यह है कि राज्य के पंथ-निरपेक्ष और लौकिक स्वरूप को मजबूत किया जाए। मानव अधिकारों की सुरक्षा का प्रबंध आवश्यक है। अतः उन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को सशक्त किया जाए जो इस क्षेत्र में कार्यरत है। लोकतंत्र का प्रयोग एक नारे या प्रतीक के रूप में नहीं अपितु जीवन पद्धति के रूप में किया जाना चाहिए। और क्या यह संभव नहीं है कि पुनः दो गुटों से बचकर एक तीसरा रास्ता निकाला जाए जो कि गुट-निरपेक्षता का हो?